[2021] 10 एस. सी. आर 499

रामावतार

वी.

मध्य प्रदेश राज्य

(वर्ष 2011 की आपराधिक अपील संख्या 1393)

25 अक्टूबर, 2021

[एन. वी. रमना, सीजेआई, सूर्या कांत और हिमा कोहली, जे. जे.]

भारत का संविधानः अनुच्छेद 142-अभियोजन का मामला यह था कि दो पड़ोसी अपीलार्थी और शिकायतकर्ता के बीच संपत्ति विवाद था - अपीलार्थी के खिलाफ एससी/एसटी अधिनियम के अन्तगर्त यह शिकायत दर्ज की गई थी कि उसने शिकायतकर्ता को बार-बार जातिगत संदर्भ में दुर्व्यवहार किया – निचली अदालतों के द्वारा अपीलार्थी को एससी/एसटी अधिनियम के अन्तगर्त दोषी पाया गया – वर्तमान अपील में, शिकायतकर्ता ने समझौता हेतु एक आवेदन दायर किया – अभिनिर्धारितः अभिलेख से पता चलता है कि दोनों पक्षों के बीच पूर्व से एक अखण्डनीय दीवानी विवाद था - इस प्रकार, प्रश्नगत घटना की उत्पत्ति दीवानी संपत्ति विवाद था - अभिलेख में किसी भी बात के संकेत नहीं मिलते है कि कथित समझौते से पहले या बाद में दोनों पक्षों के बीच कोई अप्रिय घटना हुई थी - शिकायतकर्ता, अपनी मर्जी से, बिना किसी मजबूरी के, अपीलार्थी से समझौता कर उसके खिलाफ चल रही आपराधिक कार्यवाही को समाप्त करना चाहता था-अपीलार्थी और शिकायतकर्ता एक ही गाँव के निवासी थे और एक-दूसरे के बहुत करीब रहते थे-उन्होंने स्वयं स्वेच्छा से अपना मामला सुलझा लिया था - इसलिए, पुराने घावों को पुर्नजिवित करने से बचने के लिये एवं शांति और सद्भाव को आगे बढ़ाने के लिए, समझौते को प्रभावी बनाना विवेकपूर्ण होगा-अनुच्छेद 142 के अर्न्तगत प्रदत्त शक्तियों का उपयोग करके, प्रश्नगत आपराधिक कार्यवाही को पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने के एकमात्र उद्देश्य के साथ रद्द किया जाता है अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - s.482 - राजीनामा/समझौता।

भारत का संविधानः अनुच्छेद 142 - का आह्वान - शिकायतकर्ता/पीड़ित और अभियुक्त के बीच स्वैच्छिक समझौते के आधार पर गैर-जघन्य अपराध से जुड़ी आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए – अभिनिर्धारितः जब समझौता/राजीनामा के आधार पर कार्यवाही को रद्द करने की प्रार्थना पर विचार किया जाता है, यदि न्यायालय संतुष्ट है कि अधिनियम के अंतर्निहित उद्देश्य का उल्लंघन नहीं किया जाएगा भले ही विचाराधीन अपराध को दंडित नहीं किया जाता है, केवल यह तथ्य कि अपराध एक 'विशेष क़ानून' के तहत आता है, उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को संविधान या अनुच्छेद 142 के तहत अपनी-अपनी शक्तियों का

प्रयोग करने से नहीं रोकेगा। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - s.482।

भारत का संविधानः अनुच्छेद 142 - कार्यवाही को रद्द करने की शक्तियाँ, आम तौर पर, इसका दायरा- एससी/एसटी अधिनियम जैसे विशेष कानूनों से उत्पन्न होने वाले अपराधों से निपटने के दौरान, न्यायालय अपने दृष्टिकोण में बेहद सावधानी बरतना चाहिये - एससी/एसटी अधिनियम, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अनादर, अपमान और उत्पीड़न के कृत्यों को रोकने के लिए विशेष रूप से अधिनियमित किया गया है - जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अपराध एससी/एसटी अधिनियम के तहत शामिल है, परंतु मुख्य रूप से निजी या दीवानी प्रकृति का है, या जहां कथित अपराध पीड़ित की जाति के कारण नहीं किया गया है, या जहां कानूनी कार्यवाही जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा, अदालत कार्यवाही को रद्द करने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकती है-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989: अधिनियम का उद्देश्य – अभिनिर्धारित - एससी/एसटी अधिनियम, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अनादर, अपमान और उत्पीड़न के कृत्यों को रोकने के लिए विशेष रूप से अधिनियमित किया गया है- यह अधिनियम इस निराशाजनक वास्तविकता की भी मान्यता है कि कई उपाय करने के बावजूद, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति को उच्च जातियों के हाथों विभिन्न अत्याचारों का सामना करना पड़ रहा है - यह अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 15 , 17 और 21 में उल्लेखित स्पष्ट संवैधानिक सुरक्षा उपायों को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है, जिसका दोहरा उद्देश्य इन कमजोर समुदायों के सदस्यों की सुरक्षा के साथ-साथ जाति आधारित अत्याचार पीड़ितों को राहत और पुनर्वास प्रदान करना भी है -भारत का संविधान - अनुच्छेद 15 , 17 और 21.

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :

1. यह न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो अपराध की प्रकृति और इस तथ्य को उचित विचार करने के बाद कि पीड़ित/शिकायतकर्ता ने स्वेच्छा से राजीनामा/समझौता किया है, अनुच्छेद **142** या धारा **482 Cr.P.C** के तहत शक्तियों का प्रयोग कर कार्यवाही को रद्द कर सकता है। दोषसिद्धि के बाद के मामलों में केवल तभी उक्त शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है जब एक या दूसरे न्यायिक मंच के समक्ष अपील लंबित हो। यह इस आधार पर है कि दोषसिद्धि का आदेश तब तक अंतिमता प्राप्त नहीं करता है जब तक कि अभियुक्त अपने कानूनी उपायों को समाप्त नहीं कर लेता है और अंतिमता एक अपीलीय न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। कानूनी कार्यवाही का न्यायालय के समक्ष विचाराधीन होना वरिष्ठ न्यायालय की समग्र शक्तियों को उपयोग किये जाने के लिये अपारिहार्य शर्त है चाहे वह मामला अंतिम न्यायालय के समक्ष ही क्यों न हो। इसके विपरीत, जहां सभी कानूनी उपायों की प्राप्ति के बाद कोई समझौता हुआ है, वहां समझौते के आधार पर कार्यवाही को रद्द करना अनुचित होगा। अभियुक्त को अनिश्चितकालीन लाभ प्राप्त करने से रोकने के लिए इस तरह के प्रतिबंध की

आवश्यकता होती है, क्योंकि इस तरह का राजीनामा/समझौता हमेशा अपनी प्रमाणिकता के बारे में छिपे हुए संदेह से भरा रहेगा। इन असाधारण शक्तियों का उद्देश्य अभियुक्त और पीड़ित के बीच किसी भी खोखले समझौतों को प्रोत्साहित करना नहीं है, बल्कि वास्तविक समझौता करके पूर्ण न्याय करना है। [पैरा 10,13] [508-एच; 509-ए-डी]

रामगोपाल और अन्र वी. मध्य प्रदेश राज्य 2021 (11) स्केल 555 की पुष्टि की।

2.1 भले ही अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय की शक्तियाँ विस्त्रत और दूरगामी हैं, उनका उपयोग व्यर्थ में नहीं किया जा सकता है। यह सच है कि साधारण कानून या उसमें निहित कोई प्रतिबंध, "पूर्ण न्याय" करने की न्यायालय की शक्ति पर एक सीमा के रूप में नहीं माना जा सकता है।_हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि यह न्यायालय वैधानिक प्रावधानों या कानून में अन्य स्पष्ट निषेधों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर सकता है। वास्तव में, न्यायालय प्रासंगिक कानूनों पर ध्यान देने के लिए बाध्य है और उसे तदनुसार अपनी शक्ति और विवेक के उपयोग को विनियमित करना होगा। [पैरा 14] [509-डी-ई]

सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन वी. भारत संघ और अन्य (1998) 4 एससीसी 409: [1998] 2 एस. सी. आर. 795-अनुसरण किया गया।

2.2 आम तौर पर, एससी/एसटी अधिनियम जैसे विशेष कानूनों से उत्पन्न होने वाले अपराधों से निपटने के दौरान, न्यायालय अपने दृष्टिकोण में बेहद सावधान रहेगा। एससी/एसटी अधिनियम विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अनादर, अपमान और उत्पीड़न के कृत्यों को रोकने के लिए लागू किया गया है। यह अधिनियम इस निराशाजनक वास्तविकता की भी मान्यता है कि कई उपाय करने के बावजूद अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों को उच्च जातियों के हाथों विभिन्न अत्याचारों का सामना करना पड़ रहा है। यह अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 15 , 17 और 21 में उल्लेखित स्पष्ट संवैधानिक सुरक्षा उपायों को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है, जिसका दोहरा उद्देश्य इन कमजोर समुदायों के सदस्यों की सुरक्षा के साथ-साथ जाति आधारित अत्याचार पीड़ितों को राहत और पुनर्वास प्रदान करना भी है। [पैरा 15] [510-सी-ई]

2.3 दूसरी ओर, जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि विचाराधीन अपराध, हालांकि एससी/एसटी अधिनियम के तहत आता है, मुख्य रूप से निजी या दीवानी प्रकृति का है, या जहां कथित अपराध पीड़ित की जाति के कारण नहीं किया गया है, या जहां कानूनी कार्यवाही जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा, तो न्यायालय कार्यवाही को रद्द करने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। इसी तरह, जब किसी राजीनामा/समझौते के आधार पर रद्द करने की प्रार्थना पर विचार किया जाता है, यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अधिनियम के अंतर्निहित उद्देश्य का उल्लंघन या कमी नहीं होगी, भले ही विचाराधीन अपराध को दंडित नहीं किया जाता है, तो केवल यह तथ्य कि अपराध एक ' विशेष कानून 'इस न्यायालय या उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 या धारा 482 के तहत अपनी-अपनी शक्तियों का प्रयोग

करने से नहीं रोकेगा। इस जैसे मामलों में न्यायालयों को यह सुनिश्चित करने के लिए और भी अधिक सतर्क रहना चाहिए कि शिकायतकर्ता-पीड़ित ने अपनी स्वतंत्र इच्छा से समझौता किया है न कि किसी दबाव के कारण। यह समझना होगा कि चूंकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्य हमारे देश के कमजोर वर्गों से हैं, इसलिए वे दबाव के लिए अधिक प्रवण हैं, और इसलिए उन्हें उच्च स्तर की सुरक्षा दी जानी चाहिए। यदि अदालतों को मजबूरी या दबाव का संकेत भी मिलता है, तो आरोपी पक्ष को कोई राहत नहीं दी जा सकती है। प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर यह निर्भर करेगा कि अदालतों को किन तत्वों पर विचार करना चाहिए, । **[पैरा 16,18] [510-एफ-एच; 511-सी-ई]**

2.4 अनुच्छेद **142** के तहत शक्तियों का उपयोग करके, वर्तमान आपराधिक कार्यवाही को पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के एकमात्र उद्देश्य के साथ निरस्त किया जाता है, जिनके कारण निम्न हैः *प्रथम,* एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3**(1)(x)** का विशेष उद्देश्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अनादर, अपमान जब उनका उपयोग अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति समुदाय से संबंधित होने के कारण पीड़ित को नीचा दिखाने के इरादे से किया जाता है। वर्तमान मामले में, रिकॉर्ड से पता चलता है कि दोनों पक्षों के बीच एक निर्विवाद पूर्व-मौजूदा दीवानी विवाद था। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए, इस घटना को इस रूप में वर्गीकृत करना गलत नहीं होगा कि यह प्रकृति में अत्यधिक निजी है, जिसमें केवल आपराधिकता के सूक्ष्म अर्थ निहित हैं, भले ही वर्तमान मामले में एक विशेष क़ानून के प्रावधानों को आकर्षित किया गया हो। *दूसरा,* विचाराधीन अपराध, जिसके लिए अपीलार्थी को दोषी ठहराया गया है, अपनी मानसिक भ्रष्टता को प्रदर्शित नहीं करता है। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम का उद्देश्य समाज के उच्च वर्ग के अत्याचारी कृत्यों से दलित वर्गों के सदस्यों की रक्षा करना है। ऐसा प्रतीत होता है कि यद्यपि अपीलार्थी शिकायतकर्ता के समान जाति से संबंधित नहीं हो सकता है, वह भी समाज के अपेक्षाकृत कमजोर/पिछड़े वर्ग से संबंधित है और पीड़ित की तुलना में निश्चित रूप से किसी बेहतर आर्थिक या सामाजिक स्थिति में नहीं है। भारतीय गाँवों में अलगाव के व्यापक प्रसार बावजूद, जहाँ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के सदस्यों को केवल कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रहने के लिए मजबूर किया जाता है, यह देखा गया कि वर्तमान मामले में, अपीलार्थी और शिकायतकर्ता आस-पास के घरों में रहते थे। इसलिए, अपीलार्थी की सामाजिक आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान कार्यवाही निरस्त कर दी जाती है तो एससी/एसटी अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य अभिभूत नहीं होगा । *तीसरा,* यह घटना बहुत पहले वर्ष **1994** में हुई थी। अभिलेख पर ऐसे कोई तथ्य नहीं हैं जो संकेत देते हैं कि कथित समझौते से पहले या बाद में दोनों पक्षों के मध्य कोई अप्रिय घटना हुई थी। राज्य के वकील ने कोई अन्य घटना भी नहीं बताई है जिससे यह विश्वास हो कि अपीलार्थी के द्वारा इसी प्रकार का अन्य कोई अपराध किया गया हो या जो हुआ उसके बारे में उसे पछतावा नहीं है। *चौथा,* शिकायतकर्ता ने अपनी मर्जी से, बिना किसी मजबूरी के, समझौता किया है और आरोपी के खिलाफ वर्तमान आपराधिक कार्यवाही को त्यागना चाहता है। *पाँचवाँ,* अपराध की प्रकृति को देखते हुए, यह कोई मायने नहीं रखता कि अपीलार्थी के खिलाफ मुकदमा समाप्त हो गया था। *छठा,* अपीलार्थी और शिकायतकर्ता पक्ष एक ही गाँव के निवासी हैं और एक दूसरे के बहुत करीब रहते हैं। संदेह करने का कोई कारण नहीं है कि पक्षकारों ने स्वयं स्वेच्छा से अपने मतभेदों को सुलझा लिया है।

इसलिए, ठीक हुए घावों के पुनरुत्थान से बचने और शांति और सद्भाव को आगे बढ़ाने के लिए, समझौते को प्रभावी बनाना विवेकपूर्ण होगा। [पैरा 19] [511-ई-एच; 512-ए-एच]

हितेश वर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्र **(2020) 10 एस. सी. सी. 710;** राम लाल और अन्र वी. जे एंड के राज्य **(1999) 2 एस. सी. सी. 213: [1999] 1 एस. सी. आर. 230;** सुरेंद्र नाथ मोहंती और अन्र वी. उड़ीसा राज्य **(1999) 5 एससीसी 238: [1999] 2 एस. सी. आर. 1005;** बैंकट और अन्र वी. महाराष्ट्र राज्य **(2005) 1 एससीसी 343: [2004] 6 पूरक। एस. सी. आर. 406 संदर्भित है।**

मामला कानून संदर्भ

(2020) 10 एस. सी. सी. 710 संदर्भित किया गया है पैरा 7 [1999] 1 एससीआर 230 संदर्भित किया गया है
पैरा 8 [1999] 2 एससीआर 1005 संदर्भित किया गया है
पैरा 8 [2004] 6 पूरक। एससीआर 406 संदर्भित किया गया है
पैरा 8 2021 (11) स्केल 555
पुष्टि की पैरा 10 [1998] 2 एससीआर 795
अनुसरण किया। पैरा 14

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील2011 की सं. 1393

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय जबलपुर के निर्णय और आदेश दिनांक 02.08.2010 जो कि 1995 की आपराधिक अपील क्रमांक1684 में पारित किया गया।

सुश्री आभा आर. शर्मा, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

प्रणीत प्रणव, पशुपति नाथ राजदान, अधिवक्ता उत्तरदाता के लिए ।

सूर्या कान्त, जे।

एक जमीन के टुकड़े के स्वामित्व और स्वामित्व एवं कब्जे के अधिकारों पर एक दीवानी विवाद अपीलार्थी और उसके पड़ोसी प्रेमबाई के बीच एक बुरा मोड़ ले लिया जब अपीलार्थी ने कथित रूप से न केवल शिकायतकर्ता पर ईंट फेंकी, बल्कि उसकी जाति पर गंदी और अभद्र टिप्पणी भी की, जिससे शिकायतकर्ता को पुलिस स्टेशन ओ. ई. में प्राथमिकी संख्या 18/94 अंतर्गत भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आई. पी. सी.') की धारा 34 के सहपठित अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण अधिनियम), 1989 (संक्षेप में 'एस. सी./एस. टी. अधिनियम') की धारा 3(1)(x) दर्ज करने के लिए प्रेरित किया। अपीलार्थी और उसके सह-अभियुक्त पर बाद में मुकदमा चलाया गया, जिसके कारण अपीलार्थी को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3(1)(x) के तहत दोषी ठहराया गया और इसके परिणामस्वरूप छह महीने के कठोर कारावास और एक हजार रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। 1000 / - . अपीलार्थी ने अपनी दोषसिद्धि और सजा को मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर पीठ के

समक्ष चुनौती दी, लेकिन उसकी अपील को दिनांक 02.08.2010 के प्रश्नगत फैसले के माध्यम से खारिज कर दिया गया।

संक्षिप्त तथ्यः

2. रामावतार (अपीलार्थी) और प्रेमबाई (शिकायतकर्ता), जो पड़ोसी हैं और आसपास के घरों में रहते हैं, एक संपत्ति के विवाद में फंस गए थे, जो कि भूमि के उस हिस्से के संबंध में है जिस पर प्रेमबाई का घर बनाया गया था। 25.06.1994 को, रामावतार और उसके भाई कटूलाल @कुडडू (सह-आरोपी) ने प्रेमबाई के घर में एक दीवार तोड़ दी और एक दरवाजा बनाया जो प्रेमबाई के घर में खुलता था। जब उसने इसका विरोध किया, तो दोनों पक्षों के बीच झगड़ा हो गया और अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता पर ईंट फेंक दी। इसके बाद, उसी तारीख को पुलिस स्टेशन, देवेंद्र नगर में इस घटना की सूचना दी गई और एक शिकायत दर्ज की गई, और एक एम. एल. सी. भी किया गया था। चूँकि चोट की प्रकृति सरल थी, और अपराध को संज्ञेय नहीं पाया गया था, इसलिए पुलिस ने आगे कोई कदम नहीं उठाया। अगले दिन, यानी 26.06.1994, जब शिकायतकर्ता अपने आवास के सामने बैठी थी, अपीलार्थी और उसका भाई घटनास्थल पर उपस्थित हुए। वे इस बात से स्पष्ट रूप से क्रोधित थे कि प्रेमबाई ने उनके खिलाफ एफ. आई. आर. दर्ज कराया था। उन्होंने बार-बार उसकी जाति के संदर्भ में उसे गाली देना शुरू कर दिया और साथ ही उसे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी भी दी। उसके बाद, शिकायतकर्ता और उसके पति छोटेलाल ने हरिजन कल्याण पुलिस स्टेशन के समक्ष इस घटना की सूचना दी और वर्तमान-एफ. आई. आर. आरोपी के खिलाफ एससी/एसटी अधिनियम के तहत मामला दर्ज किया गया था।

3. ऊपर बताए गए तथ्यों के आलोक में जाँच शुरू की गई। पर्याप्त साक्ष्य के संग्रह पर, अपीलार्थी और सह-अभियुक्त को आई. पी. सी. की धारा 34 के सहपठित अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3(1)(x) के तहत मुकदमे के लिए उपार्पित किया गया।

4. ट्रायल कोर्ट ने कहा कि शिकायतकर्ता 'प्रजापति' समुदाय से है जो एक अनुसूचित जाति है। यह भी देखा गया कि दोनों पक्षों ने उनके बीच लंबित संपत्ति विवाद को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था। ट्रायल कोर्ट ने आगे माना कि अभियोजन पक्ष के गवाहों ने, मोटे तौर पर, शिकायतकर्ताके संस्करण का समर्थन किया था, और निर्विवाद रूप से पुष्टि की थी कि रामावतार और कुड्डू ने शिकायतकर्ता पर अपमानजनक भाषा का इस्तेमाल किया था। यह पाया गया कि अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता का अपमान करने के इरादे से उसकी जाति का विशिष्ट संदर्भ दिया था। अपीलार्थी एवं सहअभियुक्त् कुड्डू के कृत्य को धारा 34 आई. पी. सी. के सहपठित अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3(1)(x) का उल्लंघन करते हुए अभिनिर्धारित किया गया। इसलिए, विचारण न्यायालय ने दोनों अभियुक्त व्यक्तियों को उक्त अपराधों के लिए दोषी ठहराया और उनमें से प्रत्येक को 6 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई।

5. अपनी दोषसिद्धि से असंतुष्ट, अभियुक्तों ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर पीठ के समक्ष अपील की। हालाँकि, कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, सह-अभियुक्त कुडडू की मृत्यु हो गई, और अपील केवल वर्तमान अपीलार्थी के संबंध में बची रही। उच्च न्यायालय के समक्ष

उनका प्राथमिक तर्क था कि दुर्व्यवहार, यदि कोई हो, तो शिकायतकर्ता के अनुसूचित जाति समुदाय का सदस्य होने के कारण उसे नीचा दिखाने के लिए नहीं था। इसके बजाय, यह घटना दोनों पक्षों के बीच संपत्ति विवाद के कारण हुई। इस प्रकार यह निवेदन किया गया कि कथित घटना एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों को आकर्षित नहीं कर सकती है। हालाँकि, अभिलेख पर साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के बाद, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तर्क से असहमति जताई और कहा कि यह स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी कि शिकायतकर्ता अनुसूचित जाति समुदाय का सदस्य होने के नाते अपीलार्थी द्वारा उसे अपमानित किया गया था। इस प्रकार, निचली अदालत के निष्कर्षों के साथ सहमति जताते हुए, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के खिलाफ दोषसिद्धि और पारित सजा के आदेश को यथावत् रखा।

6. पीड़ित, अपीलार्थी ने इस अदालत का दरवाजा खटखटाया है।

उभयपक्ष के तर्क:

7. जब वर्तमानअपील सुनवाई के लिए आई, तो इस अदालत को नोटिस जारी करने के लिए जो तथ्य प्रेरित किया, वह यह था कि मामले को दोनों पक्षों के बीच सुलझा लिया गया था और पक्षकारों और शिकायतकर्ता ने राजीनामा के लिए आवेदन प्रस्तुत किया था। उसी तथ्यों को दोहराते हुए, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने हमारे सामने तर्क किया कि पक्षकार एक ही गाँव के निवासी हैं और उनके बीच कोई मौजूदा दुश्मनी नहीं है। यह तर्क किया गया था कि पक्ष अपने विवाद को निपटाना चाहते हैं ताकि उनके बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बने रहें। उन्होंने हितेश वर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य और अन्य[1] के मामले पर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि समाज के एक कमजोर वर्ग और समाज के किसी उच्च जाति व्यक्ति के बीच संपत्ति विवाद एससी/एसटी अधिनियम के तहत अपराध को आकर्षित नहीं करेगी, जब तक कि आरोप पीड़ित के अनुसूचित जाति होने के कारण न हों। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने इस प्रकार वर्तमानआपराधिक कार्यवाही को निरस्त करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय की शक्तियों का प्रयोगकरने का अनुरोध किया। अपीलार्थी के रुख और राजीनामा के आवेदन का शिकायतकर्ता के विद्वान वकील द्वारा पूरी तरह से समर्थन किया गया था।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान वकील ने राजीनामा के तथ्य का विरोध किए बिना, इस उपाय का पुरजोर विरोध किया है। यह तर्क दिया गया था कि दोषसिद्धि का एक समवर्ती निष्कर्ष था, और वर्तमान अपील में कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल नहीं था। **राम लाल और अन्न बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य**[2] **सुरेंद्र नाथ मोहंती और अन्न बनाम उड़ीसा राज्य**[3] **और बैंकट और अन्न बनाम महाराष्ट्र राज्य**[4] के मामले में इस न्यायालय के निर्णयों का उल्लेख करते हुए राज्य के विद्वान वकील ने तर्ककिया कि पक्षों के बीच कथित समझौता असंगत है क्योंकि विचाराधीन अपराध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'Cr.P.C') की धारा 320 के संदर्भ में

---

[1] (2020) 10 एस. सी. सी. 710,22 और 24

[2] (1999) 2 एससीसी213

[3] (1999) 5 एससीसी 238

[4] (2005) 1 एस. सी. सी. 343

शमनीय नहीं है। इस प्रकार यह तर्क दिया गया कि वर्तमान मामले में इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

विश्लेषणः

9. उभयपक्षों के विद्वान वकील को कुछ समय तक सुनने के बाद, हमारी राय है कि वर्तमान अपील में दो प्रश्न हमारे विचार के लिए आते हैं। *पहला,* क्या संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय के क्षेत्राधिकार को आपराधिक कार्यवाही जो कि 'गैर-शमनीय अपराध' से उत्पन्न उद्भूत होती हो, को निरस्त करने के लिए उपयोग किया जा सकता है? यदि हां, तो क्या कार्यवाही को रद्द करने की शक्ति एससी/एसटी अधिनियम जैसे विशेष कानूनों से उत्पन्न होने वाले अपराधों तक बढ़ाई जा सकती है?

10. जहाँ तक पहले प्रश्न का संबंध है, इस मामले में इस न्यायालय के हाल के निर्णय का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना उचित होगा - ***रामगोपाल और अन्य विरुद्ध मध्य प्रदेश राज्य***[5], जिसमें हम दोनों (एन. वी. रमन्ना, सीजेआई और सूर्यकांत, जे) की इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ का सामना एक समान प्रश्न से हुआ था। सकारात्मक उत्तर देते हुए, यह स्पष्ट किया गया है कि धारा 320 Cr.P.C के अंतर्गत न्यायालय के क्षेत्राधिकार अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद 142 एवं धारा 482 Cr.P.C के अंतर्गत इस न्यायालय में निहित अंतर्निहित शक्तियों के आह्वान को इसके विरुद्ध प्रतिबंध के रूप में नहीं माना जा सकता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अनुच्छेद 142 या धारा 482 Cr.P.C के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करने के लिये मुख्य मापदण्ड पक्षकारों के मध्य पूर्ण न्याय करना होना चाहिए। अतः यह न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो अपराध की प्रकृति और तथ्यों को उचित रूप से ध्यान में रखते हुये और यह देखते हुये कि पीड़ित/शिकायतकर्ता के द्वारा स्वेच्छापूर्वक समझौता/राजीनामा किया गया है, संवैधानिक/ अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर कार्यवाहियों को खत्म कर सकता है।

11. न्यायालय के द्वारा ***रामगोपाल (ऊपर उल्लिखित)*** में आगे कहा गया कि मुख्य रूप से निजी प्रकृति के आपराधिक मामले को अपीलीय स्तर सहित कार्यवाही के किसी भी चरण में निरस्त किया जा सकता है। हालाँकि, न्यायालय इस तथ्य से अवगत है कि बेईमान अपराधी क्रूर बल धमकी, रिश्वत या इस तरह के अन्य अनैतिक और अवैध साधनों के माध्यम से समझौता करके अपनी आपराधिक देनदारियों से बचने का प्रयास कर सकते हैं। न्यायालय ने आगाह किया कि जिन मामलों में दोषसिद्धि के बाद समझौता किया जाता है, अदालतों को अन्य बातों के साथ-साथ उस तरीके की सावधानीपूर्वक जांच करनी चाहिए जिसमें समझौता किया गया है, साथ ही साथ विचाराधीन घटना से पहले और बाद में आरोपी के आचरण की भी जांच करनी चाहिए। समापन करते हुए, न्यायालय ने कुछ दिशानिर्देश भी तैयार किए और कहाः

> "19 . . . फिर भी, हम दोहराते हैं कि आपराधिक कार्यवाही, क्वैशिंग के संदर्भ में ऐसी व्यापक आयाम की शक्तियों का सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिए, और

---

[5] क्रीमिनल अपील संख् या 1489/2012

निम्न बिंदुओं को ध्यान में रखना चाहिए: *(i) समाज की चेतना पर अपराध की प्रकृति और प्रभाव ; (ii) चोट की गंभीरता चोट, यदि कोई हो; (iii) अभियुक्त और पीड़ित दोनों के बीच समझौते की स्वैच्छिक प्रकृति ; और (iv) अभियुक्त व्यक्ति का आचरण , कथित घटना से पहले और बाद में अपराध और/या अन्य प्रासंगिक विचार।*

[जोर दिया गया]

12. कानून के तय किए **गए प्रस्ताव को देखते** हुए, हम *रामगोपाल (ऊपर उल्लिखित)* निर्णय की पुष्टि करते हैं और यह दोहराते हैं कि शिकायतकर्ता/पीड़ित और अभियुक्त के बीच स्वैच्छिक सह-समझौते के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय की शक्तियों का उपयोग किया जा सकता है।

13. हालाँकि, हम एक और चेतावनी देते हैं कि अनुच्छेद 142 या धारा 482 Cr.P.C के अंतर्गत शक्तियां, दोषसिद्धि के बाद में तभी प्रयोग किया जा सकता है जब एक या दूसरे न्यायिक मंच के समक्ष अपील लंबित हो। यह इस आधार पर है कि दोषसिद्धि का आदेश तब तक अंतिमता प्राप्त नहीं करता है जब तक अभियुक्त अपने कानूनी उपायों को समाप्त नहीं कर लेता है और एक अपीलीय अदालत के समक्ष अंतिमता विचाराधीन नहीं है। कानूनी कार्यवाही की लंबितता, चाहे वह अंतिम न्यायालय के समक्ष हो, पूर्ण न्याय करने के लिए उच्च न्यायालय की पूर्ण शक्तियों को शामिल करने के लिए अनिवार्य है। इसके विपरीत, जहां सभी कानूनी उपायों की प्राप्ति के बाद कोई समझौता हुआ है, वहां समझौते के आधार पर कार्यवाही को रद्द करना अस्वीकार्य होगा। अभियुक्त को अनिश्चितकालीन लाभ प्राप्त करने से रोकने के लिए इस तरह के प्रतिबंध की आवश्यकता होती है, क्योंकि इस तरह का राजीनामा/समझौता हमेशा अपनी प्रामाणिकता के बारे में छिपे हुए संदेह से भरा रहेगा। हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि इन असाधारण शक्तियों का उद्देश्य अभियुक्त और पीड़ित के बीच किसी भी खोखले समझौतों को प्रोत्साहित करना नहीं है, बल्कि इन समझौतों को लागू करके पूर्ण न्याय वास्तविक निपटान करना है। ।

14. हमारे सामने दूसरे प्रश्न के संबंध में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि भले ही अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय की शक्तियां व्यापक और दूरगामी हैं, इसका उपयोग निर्वात में नहीं किया जा सकता है। यह सच है कि साधारण कानूनों या उनमें निहित किसी भी प्रतिबंध को "पूर्ण न्याय" करने की न्यायालय की शक्ति पर एक सीमा के रूप में नहीं देखा जा सकता है। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि यह न्यायालय वैधानिक प्रावधानों या कानून में अन्य स्पष्ट निषेधों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर सकता है। वास्तव में, न्यायालय प्रासंगिक कानूनों पर ध्यान देने के लिए बाध्य है और उसे तदनुसार अपनी शक्ति और विवेक के उपयोग को विनियमित करना होगा। *सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन विरुद्ध भारत संघ और अन्र*[6] के मामले में संविधान पीठ का निर्णय। ने इस बात को स्पष्ट रूप से इस प्रकार स्पष्ट किया है:

---

[6] (1998) 4 एससीसी 409

"48. उच्चतम न्यायालय के पास अनुच्छेद 142 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए ऐसा आदेश देने की शक्ति है जो ऐसा करने के लिए आवश्यक है जिससे "पक्षकारों के बीच उसके समक्ष लंबित किसी भी मामले या मामले में पूर्ण न्याय" हो। शक्ति की प्रकृति को न्यायालय को उन शक्तियों का प्रयोग करने के लिए अपने लिए सीमाएं निर्धारित करने के लिए प्रेरित करना चाहिए और आम तौर पर वह किसी विषय को नियंत्रित करने वाले वैधानिक प्रावधान की अवहेलना नहीं कर सकता है, सिवाय इसके कि शायद दोनों पक्षों के बीच समानताओं को संतुलित किया जाए। मुकदमेबाजी करने वाले पक्षों के विरोधाभासी दावे उनके सामने किसी कारण या मामले में "बाधाओं को दूर करके" किए जाते हैं। वास्तव में यह न्यायालय केवल विवाद-निपटान के सीमित अधिकार क्षेत्र का न्यायालय नहीं है। यह सर्वविदित और स्थापित है कि यह न्यायालय हमेशा एक कानून निर्माता रहा है और उसकी भूमिका केवल विवाद-निपटान से परे जाती है। यह एक "अस्पष्ट क्षेत्रों में समाधानकर्ता है"(*के. वीरास्वामी बनाम भारत संघ देखें* [(1991) 3 एस. सी. सी. 655: 1991 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 734] इस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 142 के तहत आदेश देते समय किसी दिए गए मामले की विषय-वस्तु से संबंधित मूल वैधानिक प्रावधान की पूरी तरह से अनदेखी नहीं की जा सकती है। वास्तव में, इन संवैधानिक शक्तियों को किसी भी तरह से किसी भी वैधानिक प्रावधान द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता है, लेकिन साथ ही इन शक्तियों का प्रयोग तब नहीं किया जा सकता है जब उनका प्रयोग स्पष्ट रूप से व्यवहार करने वाले क़ानून में स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए प्रावधानों के विषय के साथ सीधे टकराव में आ सकता है"।

15. आम तौर पर, एससी/एसटी अधिनियम जैसे विशेष कानूनों से उत्पन्न होने वाले अपराधों से निपटने के दौरान, न्यायालय को अपने दृष्टिकोण में बेहद सतर्क रहना चाहिए। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अनादर, अपमान और उत्पीड़न के कृत्यों को रोकने के लिए बनाया गया है। यह अधिनियम इस निराशाजनक वास्तविकता की भी मान्यता देता है कि कई उपाय करने के बावजूद, अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों पर उच्च जातियों के हाथों विभिन्न अत्याचार जारी हैं। न्यायालयों को इस तथ्य का ध्यान रखना होगा कि यह अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 15,17 और 21 में उल्लिखित संवैधानिक सुरक्षा उपाय इन कमजोर समुदायों के सदस्यों की सुरक्षा के साथ-साथ जाति आधारित अत्याचारों के पीड़ितों को राहत और पुनर्वास प्रदान करने के दोहरे उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये अधिनियमित किया गया है।

16. दूसरी ओर, जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि विचाराधीन अपराध, हालांकि एससी/एसटी अधिनियम के तहत शामिल है, मुख्य रूप से निजी या दीवानी प्रकृति का है, या जहां कथित अपराध पीड़ित की जाति के कारण नहीं किया गया है, या जहां कानूनी कार्यवाही जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा, न्यायालय कार्यवाही को रद्द करने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। इसी तरह, जब किसी राजीनामे/समझौते के आधार पर कार्यवाही निरस्त करने की प्रार्थना पर विचार किया जाता है, यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि

अधिनियम के अंतर्निहित उद्देश्य का उल्लंघन या कमी नहीं होगी, भले ही विचाराधीन अपराध को दंडित नहीं किया जाता है, तो केवल यह तथ्य कि अपराध एक 'विशेष क़ानून' इस न्यायालय या उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 या धारा 482 Cr.P.C के तहत अपनी-अपनी शक्तियों का प्रयोग करने से नहीं रोकेगा।

17. प्रश्नगत मामले को ध्यान में रखते हुए, हम ध्यान देते हैं कि वर्तमान अपीलार्थी पर एससी/एसटी अधिनियम[7] की असंशोधित धारा 3(1)(x) के तहत आरोप लगाया गया है और उसे दोषी ठहराया गया है ', जो इस प्रकार थाः

> "**3. अत्याचार के अपराधों के लिए दंड- (**1) जो कोई भी, नहीं अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य होने के नाते,
>
> XXXX
>
> (x) जानबूझकर किसी भी सार्वजनिक दृष्टि के स्थान पर अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सदस्य का अपमान करने के इरादे से अपमान करता है या डराता है;
>
> XXXX"

18. हम जल्दबाजी में यह जोड़ सकते हैं कि वर्तमान जैसे मामलों में, अदालतों को यह सुनिश्चित करने के लिए और भी अधिक सतर्क रहना चाहिए कि शिकायतकर्ता पीड़ित ने अपनी स्वतंत्र इच्छा से समझौता किया है न कि किसी दबाव के कारण। यह समझना होगा कि चूंकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्य हमारे देश के कमजोर वर्गों से हैं, इसलिए वे दबाव के लिए अधिक प्रवण हैं, और इसलिए उन्हें उच्च स्तर की सुरक्षा दी जानी चाहिए। यदि अदालतों को मजबूरी या दबाव का संकेत भी मिलता है, तो आरोपी पक्ष को कोई राहत नहीं दी जा सकती है। प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर यह निर्भर करेगा कि अदालतों को किन तत्वों पर विचार करना चाहिए, ।

19. विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद वर्तमान मामले में पूर्व में बताए गए सिद्धांतों के आलोक में, साथ ही समझौते के आवेदन पर विचार करने के बाद, हम अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का उपयोग करने और तत्काल आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए इच्छुक हैं, जिसका एकमात्र उद्देश्य हमारे सामने पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करना है। हम ऐसा इन कारणों से कहते हैं किः

सबसे पहले, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की धारा 3(1)(x) के पीछे का मुख्य उद्देश्य है अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति समुदाय से संबंधित पीड़ित को नीचा दिखाने के इरादे से किया जाति-आधारित अपमान और डराने-धमकाने को रोकना है। वर्तमान मामले में, अभिलेख से पता चलता है कि पक्षों के बीच एक निर्विवाद पूर्व-मौजूदा दीवानी विवाद था। अपीलार्थी का मामला शुरू से ही यह रहा है कि कथित दुर्व्यवहार केवल लंबित विवाद पर निराशा

---

[7] अधिनियम की धारा 3 (1) (x) को 2016 के अधिनियम संख्या 1 द्वारा दिनांक 26/01/2016 से प्रतिस्थापित किया गया है।

और क्रोध कारण किए गए थे। इस प्रकार, प्रश्नगत घटना की उत्पत्ति पूर्व-वर्णित दीवानी/संपत्ति विवाद था। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि यह गलत नहीं होगा कि घटना को इस रूप में वर्गीकृत करना कि यह प्रकृति में अत्यधिक निजी है, जिसमें आपराधिकता के केवल सूक्ष्म तत्व निहितार्थ हैं, भले ही वर्तमान मामले में एक विशेष क़ानून के प्रावधानों को आकर्षित किया गया हो।

द्वितीय, प्रश्नगत मामले में जिसके लिए अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया गया है उसकी मानसिक कमियों को नहीं दर्शाता है। एससी/एसटी अधिनियम का मुख्य उद्देश्य समाज के दलित समुदायों के सदस्यों की उच्च जाति के वर्ग के अत्याचारों से सुरक्षा करना है। यह प्रतीत होता है कि यद्यपि अपीलार्थी शिकायतकर्ता के समान जाति से संबंधित नहीं हो सकता है, वह भी अपेक्षाकृत कमजोर/पिछड़े वर्ग से संबंधित है। पीड़ित की तुलना में निश्चित रूप से किसी भी बेहतर आर्थिक या सामाजिक स्थिति में नहीं है। व्यापक प्रसार के बावजूद भारतीय गाँवों में अलगाव जहां अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के सदस्यों को केवल कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रखने के लिए मजबूर किया जाता है, यह देखा गया है कि वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता और शिकायतकर्ता आस-पास के घरों में रहते थे। इसलिए, अपीलार्थी की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि यदि वर्तमान कार्यवाही को निरस्त कर दिया जाता है तो अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य अभिभूत नहीं होगा।

तीसरा, यह घटना बहुत पहले वर्ष 1994 में हुई थी। अभिलेख पर कुछ भी इंगित नहीं करता है कि कथित समझौते से पहले या बाद में, दोनों पक्षों के मध्य कोई अन्य घटना हुई है। राज्य के अधिवक्ता की ओर से भी ऐसी किसी घटना की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट नहीं किया है जिसके आधार पर कहा जा सके कि अपीलार्थी के द्वारा ऐसा अपराध पूर्व में भी किया गया था या उसे घटना के संबंध में कोई पछतावा नहीं है।

चौथा, शिकायतकर्ता के द्वारा स्वेच्छापूर्वक बिना किसी दबाव के राजीनामा किया गया और वह अभियुक्त के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने की इच्छा रखती है।

पांचवा, अपराध की विषय-वस्तु को ध्यान में रखते हुये यह मायने नहीं रखता कि अपराध किसी प्रकृति का था।

छठा, अपीलार्थी और शिकायतकर्ता पक्ष एक ही गाँव के निवासी हैं और एक दूसरे के बहुत करीब रहते हैं। हमारे पास संदेह करने का कोई कारण नहीं है कि दलों ने स्वयं स्वेच्छा से अपने मतभेदों को सुलझा लिया है। इसलिए, ठीक हुए घावों के पुनरुत्थान से बचने और शांति और सद्भाव को आगे बढ़ाने के लिए, यह विवेकपूर्ण होगा कि वर्तमान समझौते को प्रभावी बनाएँ।

20. उपरोक्त कारणों से, हम यह पाते हैं संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत हमारी शक्तियाँ का प्रयोग पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए किया जाता है। जिसके परिणामस्वरूप विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश तथा उच्च न्यायालय के

आदेश को अपास्त किया जाता है। जमानत बांड, यदि कोई हो, उन्मोचित किया जाता है। उपरोक्त परिस्थिति में अपील की अनुमति दी गई।

नीलिमा देव दत्त

अपील स्वीकार की गई।